DOI-10.53571/NJESER.2021.3.4.40-45

आधा गाँव और विस्थापन की त्रासदी

डॉ० अंजु देशवाल
एसोसिएट प्राध्यापक
श्री एल०एन० हिन्दू कॉलेज, रोहतक
मोबाइल नं० 9466723448
(Receicved:6March2021/Revised:18April2021/Accepted:23April2021/Published:29April2021)

भारत–विभाजन एक ऐसा ऐतिहासिक क्षण था जिसका प्रभाव अभूतपूर्व व दूरगामी था। यह क्षण संवेदनशील कलाकार की सृजनात्मक प्रतिभा के लिए चुनौती सिद्ध हुआ। साहित्यकार द्वारा रचित रचना उसके आस–पास के परिवेश से सम्बद्ध होती है। एक संवेदनशील साहित्यकार अपनी राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक स्थितियों से प्राप्त कटु–मधुर, सहज, तनाव व समता–विषमता को अनुभव करते हुए उन्हें शब्दबद्ध करता है। भारत–विभाजन की घटना ने भी कई भावुक साहित्यकारों के मन को गहराई से बींध दिया। इस त्रासदीयुक्त घटना ने देश के वर्तमान को ही नहीं वरन् भविष्य को भी अपनी चपेट में ले लिया। पाकिस्तान व हिन्दुस्तान दो देशों का निर्माण मात्र एक भौगोलिक आधार पर घटित घटनाक्रम नहीं था वरन् इसका आधारभूत कारक था हिन्दू और मुस्लिम सम्प्रदाय। अंग्रेजों के आगमन से पूर्व हिन्दू–मुस्लिम मैत्री का एक लम्बा इतिहास रहा है किन्तु अंग्रेजों ने श्फूट डालो राज करोश की नीति द्वारा परस्पर दो विरोधी इकाईयों का निर्माण कर दिया। व्यापक दृष्टि से इतिहास का अन्वेषण किया जाए तो हिन्दू–मुस्लिम ध्रुवीकरण आधुनिक युग की अर्थात् 19वीं सदी की देन है। सर्वप्रथम साम्प्रदायिक दंगा 1870 में होने वाला संघर्ष था। प्रसिद्ध इतिहासकार सुमित सरकार के अनुसार साम्प्रदायिक दंगों की प्रथम घटना 1809 में बनारस में हुई। तत्पश्चात् 1871–72 और 1880 के दशकों से साम्प्रदायिक दंगे आम हो गए।

1857 के विद्रोह में हिन्दू–मुस्लिम सामंजस्य के दृश्यों से भयभीत होकर अंग्रेजों ने हिन्दू–मुस्लिम विभेद की नीति अपनानी आरम्भ कर दी। अंग्रेजों ने नौकरी के लिए जाति व धर्म को आधार बनाया। अंग्रेज शासक धार्मिक विभाजन के आधार पर ही राष्ट्रवाद की धारणा को प्रोत्साहित करते रहे। ''1888 में डफरिन ने मुसलमानों को

पांच करोड़ लोगों का एक राष्ट्र बताया जो एक ही धर्म व समान रीति–रिवाज को मानते थे और जो उन दिनों की एक सांझी स्मृति अपने दिल में संजोए हुए थे तब वे दिल्ली में गद्दीनशीन थे और हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक उन्हीं की हुकूमत चलती थी।''

हिन्दू–मुस्लिम वैमनस्य या भारत–पाकिस्तान के विभाजन का आधार कोई भौगोलिक या राजनैतिक कारण नहीं है वरन् धार्मिक है जो धार्मिक आस्था व विश्वास से सम्बद्ध है। इसी के तहत विभाजन के समय जिस क्षेत्र में मुसलमान अधिक थे, उसे पाकिस्तान बना दिया गया व जहाँ हिन्दू व्यापक स्तर पर थे उसे हिन्दुस्तान नाम दिया गया। दोनों देशों ने आजादी के समय घोषणा की थी कि दोनों देशों में रह रहे हिन्दू–मुस्लिम उस राष्ट्र के नागरिक माने जाएंगे, उन्हें राष्ट्र छोड़कर जाने की आवश्यकता नहीं। किन्तु धार्मिक कट्टरता, आपसी अविश्वास, लूटमार, हत्या, बलात्कार जैसी घटनाओं ने अल्पसंख्यकों को भयभीत कर दिया। जो हिन्दू परिवार पाकिस्तान में स्थापित थे वे अपने जान–मान की रक्षा हेतु अपना सब कुछ छोड़कर हिन्दुस्तान चले आए और यही स्थिति भारत में रहने वाले मुसलमानों की थी। अपना घर, मकान, दुकान, व्यापार सब कुछ छोड़कर लोग जाने लगे, उन्हें यह भी ज्ञात नहीं था कि आगे उन्हें पुनः कैसे बसना है। इस प्रकार विभाजन में असंख्य लोगों ने विस्थापन की पीड़ा को भोगा है। अपनी तमाम उम्र की पूंजी, अपना घर–बार, जन्मभूमि सब कुछ छोड़कर ये लोग विस्थापित हो गए और इससे भी अधिक पीड़ा इन विस्थापितों को तब झेलनी पड़ी जब इनके देश में इन्हें शरणार्थी कहा गया, इनसे भेदभाव किया गया।

साम्प्रदायिक स्पर्धा और विद्वेष हमारे आधुनिक राष्ट्रीय जीवन की मुख्य विकृति के रूप में जड़ जमा चुके हैं। साम्प्रदायिकता की समस्या आज भी ज्यों की त्यों प्रवाहमान है जैसी पिछली शताब्दी के मध्य में भारत–पाक विभाजन के समय उन्माद युक्त थी। उस काल में लाखों की आबादी का विस्थापन और उसके साथ हुई आगजनी, लूटपाट, हत्या व बलात्कार की दिल दहला देने वाली घटनाएँ उसी साम्प्रदायिकता के विष के विध्वंसकारी प्रभाव को सामने लाती हैं। विस्थापन की त्रासदी भी इसी साम्प्रदायिकता का एक विध्वंसकारी प्रभाव था। सामान्य जन का अपने देश, गाँव, घर, परिवार से जो अटूट संबंध होता है, यह कथन किसी प्रमाण की मांग नहीं

करता क्योंकि हर व्यक्ति इस अहसास को, भावना को जानता है, महसूस करता है। मानव की आत्मीयता व लगाव का क्षेत्र उसका देश, उसका गाँव, उसका जन्मस्थल, वहाँ की नदी, पत्थर, झरने, पहाड़, मन्दिर–मकबरे से भी जुड़ा होता है। राही मासूम रज्जा का उपन्यास आधा गाँव इन्हीं मानवीय सम्बंधों के साथ पूर्ण था किन्तु विभाजन के उपरान्त इन्हीं मानवीय संबंधों के खोखलेपन, खालीपन ने उस गाँव की पूर्णता को समाप्त कर दिया। एक व्यक्ति का अपने गाँव या जन्म स्थान के प्रति जो आत्मीय भाव है, वह उनके पात्र तन्नु के माध्यम से उद्घाटित होते हैं– ''मैं मुसलमान हूँ, लेकिन मुझे इस गाँव से मुहब्बत है क्योंकि मैं खुद यह गाँव हूँ। मैं नील के इस गोदाम, इस तालाब और इन कच्चे रास्तों से प्यार करता हूँ, क्योंकि ये मेरे ही मुख्तलिफ रूप हैं। अल्लाह तो हर जगह है फिर गंगौली और मक्का नील के गोदाम और काबे और हमारे पोखरे और चाहे जुम्जम में क्या फर्क है।'' राही का गंगौली के प्रति जो लगाव व आत्मीयता है, उसे उसने चरित्रों के माध्यम से उकेरा है। गंगौली गाँव के कच्चे रास्ते, पगडण्डी, लकड़ी, गुटका, बनठी के करतब, उनका नारा 'बोल मुहमुदी या हुसैन' की तमाम आत्मीयता वहाँ के निवासियों के लिए संजीवनी थी। राही ने स्वयं लिखा है कि ''कलकत्ता, बम्बई, कानपुर और ढाका इस शहर की हदें हैं। दूर तक फैली हुई हदें ... यहां के रहने वाले यहाँ से जाकर भी यहीं के रहते हैं। गुब्बारे आकाश में चाहे कितनी दूर निकल जाए परन्तु अपने केन्द्र से उनका संबंध नहीं टूटता, जहाँ किसी बच्चे के हाथ में निर्जल धागे का एक सिरा होता है। इधर कुछ दिनों से ऐसा हो गया है कि बहुत से बच्चों के हाथ से यह डोर टूट गयी है। यह कहानी सच पूछिए तो उन्हीं गुब्बारों की है या शायद उन बच्चों की है जिनके हाथों में मरी हुई डोर का एक सिरा है और जो अपने गुब्बारे की तलाश कर रहे हैं और जिन्हें यह नहीं मालूम कि डोर टूट जाने पर उन गुब्बारों का अंजाम क्या हुआ।'' विभाजन से पूर्व भी गंगौली के वासी गाँव छोड़कर शहर जाते थे, पर वो दूरी उनके रिश्तों को छू भी नहीं पाती थी किन्तु विभाजन के समय जो गंगौली छोड़कर गए वे अपने पिछे सभी रिश्तों को छोड़ गए या तो वे स्वयं इन सम्बंधों को तोड़ गए या उन्हें तोड़ने के लिए विवश किया गया। डॉ० चन्द्रकान्त म० बांदिवडे ने कहा है कि ''राही की व्यथा यह है कि राजनीति के फांस ने गंगौली के सीधे–सादे, भोले जीवों को हाँफने पर ऐसा बाध्य किया कि अपने अनकिए गुनाहों के लिए उन्हें प्राणान्तक सजाएँ मिल गई। राजनीति और सड़ियल धर्म नीति

की पैंतरेंबाजी ने कुछ चुनिंदा व्यक्तियों को नौकरियाँ दिलवाई हों, मान भरा तब और रूतबा दिया हो, निरपराध लोगों के खून से सिंचित ऐशो–आराम के साधन जुटाए हों, भारत की मासूम जनता तो अनचाहे ही पाटों में पिसकर खत्म हुई।''

विभाजन की घटना से पूर्व हिन्दू व मुसलमानों में नफरत नहीं थी। गुलाबी जान हर नारायण प्रसाद सिंह की रखैल थी, किन्तु उनके प्रति वफादार थी। एक–दूसरे के धर्म का ख्याल रखा जाता था। मुसलमान हिन्दू त्यौहारों के लिए चन्दा देते थे। जहीर मियाँ ने मठ के लिए पाँच बीघे जमीन दी तो फुन्नन मियाँ ने मन्दिर के लिए जमीन दी। राही का मानना था कि हिन्दू–मुस्लिम एकता की जड़ें उतनी गहरी हैं, जितनी नुरूद्दीन शहीर की समाधि की जड़ें गंगौली में गहरी हैं।

1946 के दंगे व अफवाह गंगौली की एकता की दीवारों को नहीं तोड़ सके। गंगौली उससे प्रभावित तो हुआ किन्तु दंगे वहाँ पनप नहीं सके। अगस्त 1947 के विभाजन के उपरान्त गंगौली वीरान हो गई। ''क्योंकि इस घटना ने गाँव की बहु संख्यक मुस्लिम आबादी को दो हिस्सों में बाँट दिया। गाँव के अनेक परिवार व अनेक परिवारों के अनेक सदस्य अपना गाँव छोड़ एक नए देश, एक नए माहौल में अपनी किस्मत आजमाने चले जाते हैं। 'आधा गाँव' शीर्षक की सार्थकता भी सम्भवतः इसी संदर्भ में देखी जा सकती है क्योंकि 1947 के देश विभाजन के बाद गंगौली 'आधा गाँव' ही रह जाता है। बाकी आधा पाकिस्तान चला जाता है।''

पाकिस्तान ने सिर्फ हिन्दू को मुसलमान से अलग नहीं किया, यह मात्र दो धर्मों की जुदाई का कारण नहीं बना वरन् इसने भाई–भाई, माँ–बेटा, बाप–बेटा, पति–पत्नी आदि को भी बाँट दिया। इस मानवीय पीड़ा का चित्रण राही ने बड़े करूण शब्दों में हकीम साहब के माध्यम से किया ''बशीर, इ पाकिस्तान त हिन्दू–मुसलमान को अलग करै को बना रहा। बाकी हम त ई देख रहे की कोई मियाँ–बीवी, बाप–बेटा और भाई–बहन को अलग कर रहा।'' गंगौली गाँव के मुसलमान को पाकिस्तान व्यक्तिगत स्तर पर व्यथित कर रहा है। गंगौली गाँव तन्हाई के आलम में डूब गया था। बाप से बेटा दूर था तो पत्नी से पति के बीच मीलों का फासला था, जो पाकिस्तान की देन है।

गंगौली वासियों के लिए पाकिस्तान व मृत्यु देश में कोई फर्क नहीं था 10 क्योंकि लड़ाई से भी लोग आ जाते हैं पर पाकिस्तान से कोई लौटकर नहीं आया, तन्नू भी नहीं। उसने वहाँ से कभी अपनी पत्नी के नाम कोई खत भी नहीं लिखा। कुद्दन हकीम साहब का पुत्र जो अपने पूरे परिवार को गंगौली ही छोड़कर पाकिस्तान चला जाता है और वहाँ दूसरा निकाह कर लेता है। हकीम साहब बूढ़े हो गए हैं और कुद्दन के परिवार की चिन्ता उन्हें खाए जाती है।

दूसरी ओर सईदा की माँ सईदा का निकाह न होने के कारण परेशान है। उनका मानना है कि इस पाकिस्तान के बन जाने से उनकी बेटी सईदा का हाथ थामने वाला कोई नहीं रहा क्योंकि सभी शिक्षित नौजवान तो नौकरी की तलाश में अपना गाँव छोड़कर पाकिस्तान चले गए थे और गंगौली की लड़कियाँ यौवन की दहलीज पर खड़ी थी किन्तु उनका हाथ थामने वाला कोई नहीं था? उनकी स्थिति पर यह उद्धरण विचारणीय है ''चूंकि ये घर चचाजाद, मामूजाद, फूफीजाद भाईयों से भी खाली हो गए थे, इसलिए बेचारी लड़कियों के पास सोचने और ख्वाब देखने का कोई सिलसिला नहीं रह गया था।'' युवा वर्ग के विस्थापन से ही मुस्लिम लड़कियों के निकाह नहीं हो पाते थे तथा खानदानी सैयद अपनी पुत्रियों के विवाह के लिए नीची जात में लड़का तलाश करने लगे थे।

फुन्नन मियाँ का बेटा 'भारत छोड़ो' आंदोलन में शहीद हुआ था। लेकिन जलसे में शहर से आए नेता साम्प्रदायिक दृष्टि से उनके पुत्र मुनताज का नाम नहीं लेते। इससे फुन्नन मियाँ अन्दर तक टूट जाते हैं। देश के नाम पर हुई कुर्बानियाँ भी धर्म के आधार पर गिनी जाने लगी। राही मासूम रजा ने इस उपन्यास से यह तथ्य स्पष्ट रूप से रखा है कि जमीन से जुड़ा हुआ मुस्लिम किसान पाकिस्तान नहीं गया। मिगदाद साफ कहता है ''जहाँ हमारा खेत, तहाँ हम।''

विभाजन को लेकर जो आजादी आयी, वह हिन्दुस्तान की मुस्लिम आबादी के लिए कितना बड़ा हादसा थी। पाकिस्तान के बनने और जमींदारी के टूटने से गंगौली के शिया परिवारों की जो हालत हुई वह अत्यन्त दयनीय थी। विभाजन के समय गंगौली में कोई दंगा नहीं हुआ, खून की नदियाँ भी नहीं बही, आगजनी या बलात्कार की घटना भी नहीं हुई, जबरदस्ती मुसलमानों को उनके घर से विस्थापित भी नहीं

किया गया, किन्तु इस उपन्यास की सबसे बड़ी त्रासदी यही रही कि गंगौली का व्यक्ति, गंगौली का मुसलमान अपने गाँव, अपने घर, अपनी धरती पर सथापित होते हुए भी विस्थापित हो गया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बृजभूषण सिंह आदर्श, हिन्दी के राजनीतिक उपन्यासों का अनुशीलन, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1970
2. कैलाशपति ओझा, हिन्दी त्रासदी : सिद्धान्त और परम्परा, साहित्य सदन, देहरादून, 1968
3. चमनलाल (सम्पादक), प्रतिनिधि हिन्दी उपन्यास (भाग दूसरा), हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्ड़ीगढ़, 1988
5. नगीना जैन, औचलिकता और हिन्दी उपन्यास, अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली, 1976
5. बदरी प्रसाद, प्रगतिवादी हिन्दी उपन्यास, ओम प्रकाशन, दिल्ली, 1987
6. रमेशचन्द्र मिश्र, पाश्चात्य समीक्षा सिद्धान्त, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, 1979
7. चन्द्रभानु सोनवणे, सूर्य नारायण रणसुभे, ओमप्रकाश होलीकर, हिन्दी उपन्यासः विविध आयाम, पुस्तक संस्थान, कानपुर 1977
8. राही मासूम रजा, 'आधा गाँवः एक पूरी त्रासदी', चमनलाल (सम्पादक), प्रतिनिधि हिन्दी उपन्यास (भाग दूसरा), हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़, 1988
9. राही मासूम रजा, आधा गाँव, अक्षर प्रकाशन, दिल्ली, 1966, पृ. 312.
10. चन्द्रकान्त म. बांदिवडेकर, उपन्यासः स्थिति और गति, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1993